

तत्क्षणे पञ्चकूर्चादिर्जटायज्ञोपवीतभीक् । व्यासनामाऽभवत्पुत्रः पितुश्चक्रेभिवादनम् ॥१४॥
लौकिकं लपितं चेति मत्तचेष्टा समानकम् । कस्य चित्ते समायाति सदृष्टेर्ज्ञानचक्षुषः ॥१५॥
इत्थं मत्तजनप्रजल्पितमिमं भक्त्या कुवादीरितं विद्वद्भिर्जिनतत्त्वसारनिपुणैः सार्द्धं सदा संगतिम् ।
कृत्वा श्रीजिनधर्मकर्मणि रता भूत्वा स्वयं भक्तितो नित्यं शास्त्रमहाशुभे शुचिमतिं कुर्वन्तु सन्तः श्रिये ॥१६॥

इति कथाकोशे पाराशरस्य लौकिकी कथा समाप्ता ।

३७. सात्यकिरुद्रयोः कथा

श्रीजिनं केवलज्ञानलोचनं सम्प्रणम्य च । वक्ष्येऽहं पूर्वसूत्रेण कथां सात्यकिरुद्रयोः ॥१॥
गन्धारविषये रम्ये महेश्वरपुरेऽभवत् । राजा सत्यन्धरस्तस्य राज्ञी सत्यवती मता ॥२॥
तयोः सात्यकिनामाभूत्पुत्रो राजकलान्वितः । राजविद्यां विना राजा राजते नैव भूतले ॥३॥
सिन्धुदेशे विशालाख्यपत्तने चेटको नृपः । श्रीमज्जिनेन्द्रपादाब्जसेवनैकमधुव्रतः ॥४॥
तस्य राज्ञी सुभद्राऽभूत्सती व्रतमतल्लिका । पुत्र्यस्तयोः समुत्पन्नाः सप्त सद्रूपमण्डिताः ॥५॥
तासामाद्याभवत्पुत्री पवित्रा प्रियकारिणी । मृगावती द्वितीया च तृतीया सुप्रभा मता ॥६॥
प्रभावती चतुर्थी च पञ्चमी चेलिनी शुभा । ज्येष्ठा षष्ठी बुधैः प्रोक्ता सप्तमी चन्दना सती ॥७॥

व्यास नाम का पुत्र हुआ । उसके सिर पर जटाएँ थीं, वह यज्ञोपवीत पहने हुआ था और उससे उत्पन्न होते ही अपने पिता को नमस्कार किया । पर लोगों का यह कहना उन्मत्त पुरुष के सरीखा है और न किसी ज्ञान-नेत्र वाले की समझ में ये बातें आवेंगी ही क्योंकि वे समझते हैं कि समझदार कभी ऐसी असंभव बातें नहीं कहते किन्तु भक्ति के आवेश में आकर अतत्त्व पर विश्वास लाने वालों ने ऐसा लिख दिया है । इसलिए बुद्धिमानों को उचित है कि वे उन विद्वानों की संगति करें जो जैनधर्म का रहस्य समझने वाले हैं और जैनधर्म से ही प्रेम करें और उसी के शास्त्रों का भक्ति और श्रद्धा के साथ अध्ययन करें, उनमें पवित्र बुद्धि को लगावें, इसी से उन्हें सच्चा सुख प्राप्त होगा ॥१३-१६॥

३७. सात्यकि और रुद्र की कथा

केवलज्ञान ही जिनका नेत्र है, ऐसे जिनभगवान् को नमस्कार कर शास्त्रों के अनुसार सात्यकि और रुद्र की कथा लिखी जाती है ॥१॥

गन्धार देश में महेश्वरपुर एक सुन्दर शहर था । उसके राजा सत्यन्धर थे । सत्यन्धर की प्रिया का नाम सत्यवती था । इनके एक पुत्र हुआ उसका नाम सात्यकि था । सात्यकि ने राजविद्या में अच्छी कुशलता प्राप्त की थी और ठीक भी है, राजा बिना राजविद्या के शोभा भी नहीं पाता ॥२-३॥

इस समय सिन्धुदेश की विशाला नगरी का राजा चेटक था । चेटक जैनधर्म का पालक और जिनेन्द्र भगवान् का सच्चा भक्त था, इसकी रानी का नाम सुभद्रा था । सुभद्रा बड़ी पतिव्रता और धर्मात्मा थी । इसके सात कन्याएँ थी । उनके नाम थे-पवित्रता, मृगावती, सुप्रभा, प्रभावती, चेलना, ज्येष्ठा और चन्दना ॥४-७॥

अथाभयकुमारेण श्रेणिकाय महीभुजे। चेलिन्या भूमिमार्गेण प्रच्छन्नं नीयमानया ॥८॥
 सा ज्येष्ठाभरणव्याजाद्वज्जिता दुःखिता सती। यशस्वत्यार्यिकापार्श्वे दीक्षां जग्राह भक्तितः ॥९॥
 सात्यकेस्तस्य सा ज्येष्ठा पूर्वं दत्तास्ति वाक्यतः। तस्या दीक्षां समाकर्ण्य सात्यकिस्तु विरक्तधीः ॥१०॥
 मुनेः समाधिगुप्तस्य नत्वा पादद्वयं मुदा। जिनदीक्षां समादाय सोपि जातो मुनिस्तदा ॥११॥
 एकदा वर्द्धमानस्य श्रीमत्तीर्थकरेशिनः। वन्दनार्थं प्रगच्छन्त्यो यशस्वत्यार्यिकादयः ॥१२॥
 महाटव्यामकालोत्थवृष्ट्या ताः पीडितास्तराम्। इतस्ततो गताः कष्टं प्रावृट्कालो हि दुःसहः ॥१३॥
 ज्येष्ठा कालगुहामध्यं संप्रविश्य स्ववाससः। चक्रे निपीडनं चित्ते मत्त्वैकान्तं निजेच्छया ॥१४॥
 अन्धकारे स्थितस्तत्र सात्यकिः स मुनिस्तदा। तां दृष्ट्वा विह्वलीभूतमानसोजनि पापतः ॥१५॥

सम्राट् श्रेणिक ने चेटक से चेलना के लिए याचना की थी, पर चेटक ने उनकी आयु अधिक देखकर लड़की देने से इनकार कर दिया। इससे श्रेणिक को बहुत बुरा लगा। अपने पिता के दुःख का कारण जानकर अभयकुमार उनका एक बहुत ही बढ़िया चित्र बनवा कर विशाला में पहुँचा। उसने वह चित्र चेलना को बतलाकर उसे श्रेणिक पर मुग्ध कर लिया। पर चेलना के पिता को उसका ब्याह श्रेणिक से करना सम्मत नहीं किया था। इसलिए अभयकुमार ने गुप्त मार्ग से चेलना को ले जाने का विचार किया। जब चेलना उसके साथ जाने को तैयार हुई जब ज्येष्ठा ने उससे अपने को भी ले चलने के लिए कहा। चेलना सहमत तो हो गई, पर उसे उसका चलना इष्ट नहीं था, इसलिए जब ये दोनों बहिनें थोड़ी दूर गई होंगी कि धूर्ता चेलना ने ज्येष्ठा से कहा—बहिन, मैं अपने आभूषण तो सब महल ही में भूल आई हूँ। तू जाकर उन्हें ले आ न? मैं तब तक यहीं खड़ी हूँ। बेचारी भोली ज्येष्ठा उसके झाँसे में आकर चली गई वह थोड़ी दूर ही पहुँची होगी कि इसने इधर आगे का रास्ता पकड़ा और जब तक ज्येष्ठा संकेत स्थान पर आती है तब तक यह बहुत दूर आगे बढ़ आई। अपनी बहिन की इस कुटिलता या धोखेबाजी से ज्येष्ठा को बेहद दुःख हुआ और इसी दुःख के मारे वह यशस्वती आर्यिका के पास दीक्षा ले गई। ज्येष्ठा की सगाई सत्यन्धर के पुत्र सात्यकि से हो चुकी थी। पर जब सात्यकि ने उसका दीक्षा ले लेना सुना तो वह भी विरक्त होकर समाधिगुप्त मुनि द्वारा दीक्षा लेकर मुनि बन गया ॥८-११॥

एक दिन यशस्वती, ज्येष्ठा आदि आर्यिकाएँ श्रीवर्द्धमान भगवान् की वन्दना करने को चलीं। वे सब एक वन में पहुँची होगी कि पानी बरसने लगा, और खूब बरसा। इससे इस आर्यिका संघ को बड़ा कष्ट हुआ। कोई किधर और कोई किधर, इस तरह उनका सब संघ तितर-बितर हो गया। ज्येष्ठा एक कालगुहा नाम की गुफा में पहुँची। वह उसे एकान्त समझकर शरीर से भीगे वस्त्रों को उतार कर उन्हें निचोड़ने लगी। भाग्य से सात्यकि मुनि भी इसी गुफा में ध्यान कर रहे थे। सो उन्होंने ज्येष्ठा आर्यिका का खुला शरीर देख लिया। देखते ही विकार भावों से उनका मन भ्रष्ट हुआ और उन्होंने शीलरूपी मौलिक रत्न को आर्यिका के शरीररूपी अग्नि में झोंक दिया। सच है, काम से अन्धा बना

तद्वपुर्वन्हिना मूढः स्वकीयं शीलरत्नकम्। भस्मीचकार हा कष्टं कामान्धः किं करोति न ॥१६॥
ततस्तदिङ्गितैर्जात्वा यशस्वत्यार्थिका सती। नीत्वा ताम् चेलिनीपाश्वर्ये स्थापयामास शुद्धधीः ॥१७॥
प्रच्छन्न च तया ज्येष्ठा चेलिन्या स्वगृहे धृता। सद्दृष्टयः प्रकुर्वन्ति दर्शनच्छादनं महत् ॥१८॥
सा ज्येष्ठा नवभिर्मासैः प्रसूता तनुजं ततः। चेलिन्यास्तनुजो जातः श्रेणिकेनेति घोषितम् ॥१९॥
कैश्चिद्विनैरसौ सार्द्धं वृद्धिं प्राप दुराशयैः। यो वृक्षो मूलतो नष्टस्तत्फले क्वात्र मिष्टता ॥२०॥
एकदा रौद्रभावेन मारयत्परपुत्रकान्। चेलिन्या रुष्टया सोपि रुद्रनामेति जल्पितः ॥२१॥
तथैकदा कृतेऽन्याये चेलिनी प्राह कोपतः। अन्येन जनितोऽप्यन्यं सन्तापयति पापधीः ॥२२॥
तच्छ्रुत्वा रुद्रकश्चित्ते किमप्यत्रास्ति कारणम्। विचार्येति नृपं प्राह को मे तातो महाग्रहात् ॥२३॥
ततः कष्टेन तेनोक्तं समाकर्ण्य स्ववृत्तकम्। गत्वा सात्यकिसान्निध्ये रुद्रो दीक्षां गृहीतवान् ॥२४॥

मनुष्य क्या नहीं कर डालता ॥१२-१६॥

गुराणी यशस्वती ज्येष्ठा की चेष्टा वगैरह से उसकी दशा जान गई और इस भय से कि धर्म का अपवाद न हो, वह ज्येष्ठा को चेलना के पास रख आई चेलना ने उसे अपने यहाँ गुप्त रीति से रख लिया। सो ठीक ही है, सम्यग्दृष्टि निन्दा आदि से शासन की सदा रक्षा करते हैं ॥१७॥

नौ महीने होने पर ज्येष्ठा के पुत्र हुआ। पर श्रेणिक ने इस रूप में प्रकट किया कि चेलना के पुत्र हुआ। ज्येष्ठा उसे वही रखकर आप आर्थिका के संघ में चली आई और प्रायश्चित्त लेकर तपस्विनी हो गई इसका लड़का श्रेणिक के यही पलने लगा। बड़ा होने पर वह और लड़कों के साथ खेलने को जाने लगा। पर संगति इसकी अच्छे लड़कों के साथ नहीं थी इससे इसके स्वभाव में कठोरता अधिक आ गई। यह अपने साथ के खेलने वाले लड़को को रुद्रता के साथ मारने-पीटने लगा। इसकी शिकायत महारानी के पास आने लगी। महारानी को इस पर बड़ा गुस्सा आया। उसने इसका ऐसा रौद्र स्वभाव देखकर नाम भी इसका रुद्र रख दिया। सो ठीक ही है जो वृक्ष जड़ से खराब होता है तब उसके फलों में मीठापन आ भी कहाँ से सकता है। इसी तरह रुद्र से एक दिन और कोई अपराध बन पड़ा। सो चेलना ने अधिक गुस्से में आकर यह कह डाला कि किसने तो इस दुष्ट को जना और किसे यह कष्ट देता है। चेलना के मुँह से, जिसे कि यह अपनी माता समझता था, ऐसी अचम्भा पैदा करने वाली बात सुनकर बड़े गहरे विचार में पड़ गया। इसने सोचा कि इसमें कोई कारण जरूर होना चाहिए। यह सोचकर यह श्रेणिक के पास पहुँचा और उनसे इसने आग्रह के साथ पूछा-पिताजी, सच बतलाइए, मेरे वास्तव में पिता कौन हैं और कहाँ हैं? श्रेणिक ने इस बात के बताने को बहुत आनाकानी की। पर जब रुद्र ने बहुत ही उनका पीछा किया और किसी तरह वह नहीं मानने लगा। तब लाचार हो उन्हें सब सच्ची बात बता देनी पड़ी। रुद्र को इससे बड़ा वैराग्य हुआ और वह अपने पिता के पास जाकर मुनि हो गया ॥१८-२४॥

ततश्चैकादशाङ्गानि दशपूर्वमहाश्रुतम्। तस्योच्चैः पठतः शास्त्रप्रभावेण समागता ॥२५॥
 विद्याः पञ्चशतान्याशु महत्यश्च तथा पराः। लघ्व्यः सप्तशतान्येव विद्याः सिद्धा मनोहराः ॥२६॥
 लोभतः सोपि ता विद्याः स्वीचक्रे रुद्रकस्तदा। श्रेयसे न भवेल्लोभो भाविसौख्यक्षयंकरः ॥२७॥
 रुद्रस्ताभिश्च विद्याभिर्गोकर्णगिरिमस्तके। महातापनयोगस्थं सात्यकिं तं मुनीश्वरम् ॥२८॥
 वन्दितुं ये समायान्ति भक्ता भव्यमतल्लिकाः। सिंहव्याघ्रादिरूपेण दुष्टस्तांस्त्रासयते तराम् ॥२९॥
 तदाकर्ण्य तं प्राह सात्यकिर्मुनिसत्तमः। अहो रुद्र वृथा चेष्टां मा कुरु त्वं प्रकष्टदाम् ॥३०॥
 स्त्रीनिमित्तात्तपोभङ्गः संभविष्यति ते कुधीः। इत्याकर्ण्य गुरोर्वाक्यं स रुद्रो दुष्टमानसः ॥३१॥
 चेष्टां न मुञ्चति स्मोच्चैस्तां करोति स्म पापतः। मानसे नैव तिष्ठन्ति पापिनां सद्गुरोर्गिरिः ॥३२॥
 ततः कैलासनामानं पर्वतं सुमनोहरम्। गत्वा तापनयोगेन स्थितोसौ मुनिमर्कटः ॥३३॥
 अथेह विजयाद्धं च दक्षिणश्रेणिसंस्थितम्। पुरं मेघनिबद्धाख्यं मेघादिनिचयं पुनः ॥३४॥

एक दिन रुद्र ग्यारह अंग और दस पूर्व का बड़े ऊँचे से पाठ कर रहा था। उस समय श्रुतज्ञान के माहात्म्य से पाँच सौ तो बड़ी-बड़ी विद्याएँ और सात सौ छोटी-छोटी विद्याएँ सिद्ध होकर आयी। उन्होंने अपने को स्वीकार करने की रुद्र से प्रार्थना की। रुद्र ने लोभ के वश हो उन्हें स्वीकार तो कर लिया, पर लोभ आगे होने वाले सुख और कल्याण के नाश का कारण होता है, इसका उसने कुछ विचार न किया ॥२५-२७॥

इस समय सात्यकि मुनि गोकर्ण पर्वत की ऊँची चोटी पर प्रायः ध्यान किया करते थे। समय गर्मी का था। उनकी वन्दना को अनेक धर्मात्मा भव्य-पुरुष आया जाया करते थे। पर जब से रुद्र को विद्याएँ सिद्ध हुई, तब से वह मुनि-वन्दना के लिए आने वाले धर्मात्मा भव्य-पुरुषों को अपने विद्याबल से सिंह, व्याघ्र, गेंडा, चीता आदि हिंसक और भयंकर पशुओं द्वारा डरा कर पर्वत पर न जाने देता था। सात्यकि मुनि को जब यह हाल ज्ञात हुआ तब उन्होंने इसे समझाया और ऐसे दुष्ट कार्य करने से रोका। पर इसने उनका कहा नहीं माना और अधिक यह लोगों को कष्ट देने लगा। सात्यकि ने तब कहा-तेरे इस पाप का फल बहुत बुरा होगा ॥२८-३०॥

तेरी तपस्या नष्ट होगी। तू स्त्रियों द्वारा तपभ्रष्टा होकर आखिर मृत्यु का ग्रास बनेगा। इसलिए अभी तुझे सम्हल जाना चाहिए। जिससे कुगतियों के दुःख न भोगना पड़े। रुद्र पर उनके इस कहने का कुछ असर न हुआ। वह और अपनी दुष्टता करता ही चला गया। सच है, पापियों के हृदय में गुरुओं का अच्छा उपदेश कभी नहीं ठहरता ॥३१-३२॥

एक दिन रुद्र मुनि प्रकृति के दृश्यों से अपूर्व मनोहरता धारण किए हुए कैलाश पर्वत पर गया और वहाँ तापन योग द्वारा तप करने लगा। इसके बीच में एक और कथा है, जिसका इसी से सम्बन्ध है। विजयाद्ध पर्वत की दक्षिण श्रेणी में मेघनिबद्ध, मेघनिचय और मेघनिदान ऐसे तीन सुन्दर शहर हैं।

तथा मेघनिदानं च तेषु राजा महानभूत्। कनकादिरथो नाम्ना राज्ञी तस्य मनोहरा ॥३५॥
तयोः पुत्रौ समुत्पन्नौ देवदारुद्वितीयकः। विद्युज्जिह्वो महाविद्या-रूपसौभाग्यमण्डितौ ॥३६॥
एकदा स महाराजस्त्रिधा वैराग्ययोगतः। देवदारुसुपुत्राय राज्यं दत्त्वा प्रमोदतः ॥३७॥
दीक्षां गणधराख्यस्य मुनेः पार्श्वे विकल्मषः। समादाय मुनिर्जातो भव्यसन्दोहतारकः ॥३८॥
कैश्चिद्विनैस्ततः सोपि देवदारुखगाधिपः। निर्घाटितो लघुभात्रा विद्युज्जिह्वेन लोभिना ॥३९॥
तस्मात्कैलासमागत्य संस्थितो मानभंगतः। कुटुम्बकलहेनात्र नष्टाः के के न भूतले ॥४०॥
तस्याष्टौ च महाकन्याः प्रोल्लसद्रूपसम्पदाः। वाप्यां स्नातुं समायान्ता यत्रास्ते रुद्रको मुनिः ॥४१॥
यावद्वापी तटे धृत्वा वस्त्राभरणसञ्चयम्। कन्यास्तोये प्रविष्टास्ताः स्नानं कर्तुं निजेच्छया ॥४२॥
तदा तद्रूपसंस्तुतः स रुद्रः स्मरपीडितः। विद्यया चोरयामास तासां वस्त्रादिकं कुधीः ॥४३॥
ततस्ताभिः समागत्य व्याकुलाभिः स्वचेतसि। पृष्टः सोपि मुनिः स्वामित्रस्माकं केन सहतः ॥४४॥
वस्त्रालंकारसन्दोहो ब्रूहि भो नाथ वेगतः। आपदायां कुतो लज्जा प्राणिनां पापकर्मतः ॥४५॥
तेनोक्तं यदि मां यूय-मिच्छथेति सुनिश्चितम्। तदाहं दर्शयाम्युच्चैर्युष्माकं सर्ववस्तुकम् ॥४६॥

उनका राजा था कनकरथ। कनकरथ की रानी का नाम मनोहरा था। इसके दो पुत्र हुए। एक देवदारु और दूसरा विद्युज्जिह्व। ये दोनों भाई खूबसूरत भी थे और विद्वान् भी थे। इन्हें योग्य देखकर इनका पिता कनकरथ राज्यशासन का भार बड़े पुत्र देवदारु को सौंप आप गणधर मुनिराज के पास दीक्षा लेकर योगी बन गया। सबको कल्याण के मार्ग पर लगाना ही एक मात्र अब इसका कर्तव्य हो गया ॥३३-३८॥

दोनों भाईयों की कुछ दिनों तक तो पटी, पर बाद में किसी कारण को लेकर बिगड़ पड़ी। उसका फल यह निकला कि छोटे भाई ने राज्य के लोभ में फँसकर और अपने बड़े भाई के विरुद्ध षड्यंत्र रच उसे राज्य से निकाल दिया। देवदारु को अपने मानभंग का बड़ा दुःख हुआ। वह वहाँ से चलकर कैलाश पर आया यहीं पर रहने भी लगा। सच है, घरेलू झगड़ों से कौन नष्ट नहीं हो जाता। देवदारु के आठ कन्याएँ थीं और सब ही सुन्दर थीं। सो एक दिन ये सब बहिनें मिलकर तालाब पर स्नान करने को आई अपने सब कपड़े उतारकर ये नहाने को जल में घुसीं। रुद्र मुनि ने इन्हें खुले शरीर देखा। देखते ही वह काम से पीड़ा जाकर इन पर मोहित हो गया। उसने अपनी विद्या द्वारा उनके सब कपड़े चुरा मँगाये। कन्याएँ जब नहाकर जल बाहर हुई तब उन्होंने देखा कपड़े वहाँ नहीं; उन्हें बड़ा ही आश्चर्य हुआ। वे खड़ी-खड़ी बेचारी लज्जा के मारे सिकुड़ने लगीं और व्याकुल भी वे अत्यन्त हुई, इतने में उनकी नजर रुद्र मुनि पर पड़ी। उन्होंने मुनि के पास जाकर बड़े संकोच के साथ पूछा-प्रभो, हमारे वस्त्रों को यहाँ से कौन ले गया? कृपाकर हमें बतलाइए। सच है, पाप के उदय से आपत्ति आ पड़ने पर लज्जा संकोच सब जाता रहता है। पापी रुद्र मुनि ने निर्लज्ज होकर उन कन्याओं से कहा-हाँ मैं तुम्हारे वस्त्र वगैरह सब बता सकता हूँ, पर इस शर्त पर कि यदि तुम मुझे चाहने लगे। तब कन्याओं ने कहा-हम अभी अबोध ठहरी, इसलिए हमें इस बात पर विचार

ताभिरुक्तं यदास्माकं पिता तुभ्यं ददाति नः। त्वामिच्छामस्तदा सत्यं वाक्यमेतत्कुलस्त्रियः ॥४७॥
 इत्युक्ते तेन तत्सर्वं तासामेव समर्पितम्। ताभिस्ततो गृहं गत्वा स्वपितुस्तं निरूपितम् ॥४८॥
 तदाकर्ण्य ततस्तेन देवदारुखगेशिना। प्रधानः प्रेषितः शीघ्रं तत्समीपेषु कार्यवित् ॥४९॥
 विद्युज्जिह्वं खगं हत्वा राज्यं मे त्रिपुरोद्भवम्। त्वं ददासि तदा तुभ्यं दीयन्ते सर्वकन्यकाः ॥५०॥
 इति श्रुत्वा प्रधानोक्तं सर्वमेवं करोम्यहम्। अंगीचकार तद्रुद्रः कामी किं न करोत्यघम् ॥५१॥
 तदा तेन खगेन्द्रेण नीतोसौ स्वगृहं मुदा। किं करोति न राज्यार्थं राज्यभ्रष्टो महीपतिः ॥५२॥
 ततो रौद्रेण रुद्रेण स्वविद्यानां प्रभावतः। विजयाद्धिगिरिं गत्वा हत्वा तं दुष्टमानसम् ॥५३॥
 विद्युज्जिह्वं खगाधीशं त्रिपुरेषु तदा द्रुतम्। देवदारुर्नृपो राज्ये स्थापितः सन्महोत्सवैः ॥५४॥
 ततस्तेन महाभूत्या विद्याधरमहीभुजा। तस्मै रुद्राय ताः कन्या दत्ताश्चान्यास्तु भूरिशः ॥५५॥
 तदा तस्य महातीव्र-कामसेवावशं गताः। अन्येषां भूभुजां कन्याः शतशश्च क्षयं ययुः ॥५६॥
 ततोऽसौ पार्वतीख्यातां परिणीय गुणोज्ज्वलाम्। संजातः कामभोगेषु सन्तुष्टो रुद्रको महान् ॥५७॥
 दुरात्मना ततस्तेन सर्वे भूपादयस्तराम्। पीडिताः स्वस्य विद्याभिर्दुष्टात्मा कस्य शान्तये ॥५८॥

करने का कोई अधिकार नहीं। हमारे पिताजी यदि इस बात को स्वीकार कर लें तो फिर हमें कोई परेशानी नहीं रहेगी। कुल बालिकाओं का यह उत्तर देना उचित ही था। उनका उत्तर सुनकर मुनि ने उन्हें उनके वस्त्र वगैरह दे दिये। उन बालिकाओं ने घर आकर यह सब घटना अपने पिता से कह सुनाई देवदारु ने तब अपने एक विश्वस्त कर्मचारी को मुनि के पास कुछ बातें समझाकर भेजा। उसने जाकर देवदारु की ओर से कहा—आपकी इच्छा देवदारु महाराज को जान पड़ी। उसके उत्तर में उन्होंने यह कहा है कि हाँ मैं अपनी लड़कियों को आपको अर्पण कर सकता हूँ, पर इस शर्त पर कि “आप विद्युज्जिह्व को मारकर मेरा राज्य मुझे दिलवा दें।” रुद्र ने यह स्वीकार किया। सच है, कामी पुरुष कौन पाप नहीं करता। रुद्र को अपनी इच्छा के अनुकूल देख देवदारु उसे अपने घर पर लिवा लाया और बहुत ठीक है, राज्य-भ्रष्ट राजा राज्य प्राप्ति के लिए क्या काम नहीं करता ॥३९-५२॥

इसके बाद रुद्र विजयाद्धि पर्वत पर गया और विद्याओं की सहायता से उसने विद्युज्जिह्व को मारकर उसी समय देवदारु को राज्य सिंहासन पर बैठा दिया। राज्य प्राप्ति के बाद ही देवदारु ने भी अपनी प्रतिज्ञा पूरी की। अपनी सब लड़कियों का ब्याह आनन्द-उत्सव के साथ उसने रुद्र से कर दिया। इसके सिवा उसने और भी बहुत सी कन्याओं को उसके साथ ब्याह दिया। रुद्र तब बहुत ही कामी हो गया। उसके इस प्रकार तीव्र कामसेवन का नतीजा यह हुआ कि सैकड़ों बेचारी राजबालिकाएँ अकाल में मर गई पर यह पापी तब भी सन्तुष्ट नहीं हुआ। इसने अब की बार पार्वती के साथ ब्याह किया। उसके द्वारा इसकी कुछ तृप्ति जरूर हुई ॥५३-५७॥

कामी होने के सिवा इसे अपनी विद्याओं का भी बड़ा घमंड हो गया था। इसने सब राजाओं को विद्याबल से बड़ा कष्ट दे रखा था, बिना ही कारण यह सबको तंग किया करता था। और सच भी है दुष्ट से किसे शान्ति मिल सकती है। इसके द्वारा बहुत तंग आकर पार्वती के पिता तथा और भी

ततस्तस्याश्च पार्वत्यास्ताताद्यैर्दुःखतो भृशम्। कामसेवाक्षणे तस्य विद्यास्तिष्ठन्ति दूरतः ॥५९॥
 इति ज्ञात्वा स संभोगसमये क्रूरमानसः। सस्त्रीको मारितः कष्टं पापिनां सुहृदोरयः ॥६०॥
 तदा तस्य महाविद्याः स्वनाथमरणक्षणे। प्रजानां पीडनं चक्रुर्नाना व्याधिशतैस्तराम् ॥६१॥
 ततो ज्ञानिमुनेर्वाक्यात्कस्यचित्ते पुनर्जनाः। एकवारं स्वशान्त्यर्थं कृत्वा लिङ्गः क्षमां जगुः ॥६२॥
 इदं तस्मान्महामूढो गडुरीणां प्रवाहवत्। देवत्वं मानसे ज्ञात्वा मानयन्ति स्म दुर्दृशः ॥६३॥
 देवोर्हन्दोषनिर्मुक्तो देवेन्द्राद्यैः प्रपूजितः। केवलज्ञानसाम्राज्यो नान्यो रागादिदूषितः ॥६४॥

सकलभुवननाथैः पूजितो भक्तिभारैः विमलतरुणौघः केवलज्ञानचन्द्रः।

निखिलसुखसुदाता सर्वसन्तापहर्ता स जयतु जगदेकः श्रीजिनो मे प्रशान्त्यै ॥६५॥

इति कथाकाशे सात्यकिरुद्रयोः कथा समाप्ता।

बहुत से राजाओं ने मिलकर इसे मार डालने का विचार किया। पर इसके पास था विद्याओं का बल, सो उसके सामने होने की किसी की हिम्मत न पड़ती और पड़ती भी तो वे कुछ कर नहीं सकते थे। तब उन्होंने इस बात का शोध लगाया कि विद्याएँ इससे किस समय अलग रहती हैं। इस उपाय से उन्हें सफलता प्राप्त हुई। उन्हें यह ज्ञात हो गया कि कामसेवन के समय बल विद्याएँ रुद्र से पृथक् हो जाती है। सो मौका देखकर पर्वती के पिता वगैरह ने खड्ग द्वारा रुद्र को सस्त्रीक मार डाला। सच है—पापियों के मित्र भी शत्रु हो जाया करते हैं ॥५८-६०॥

विद्याएँ अपने स्वामी की मृत्यु देखकर बड़ी दुःखी हुई और साथ ही उन्हें क्रोध भी अत्यन्त आया। उन्होंने तब प्रजा को दुःख देना शुरू किया और अनेक प्रकार की बीमारियाँ प्रजा में फैला दीं। उससे बेचारी गरीब प्रजा त्राह-त्राह कर उठी। इसी समय एक ज्ञानी मुनि इस ओर आ निकले। प्रजा के कुछ लोगों ने जाकर मुनि से इस उपद्रव का कारण और उपाय पूछा। मुनि ने सब कथा कहकर कहा—जिस अवस्था में रुद्र मारा गया है, उसकी एक बार स्थापना करके उससे क्षमा कराओ। वैसा ही किया गया। प्रजा का उपद्रव शान्त हुआ, पर तब भी लोगों की मूर्खता देखो जो एक बार कोई काम किसी कारण को लेकर किया गया सो उसे अब तक भी गडरिया प्रवाह की तरह करते चले आते हैं और देवता के रूप में उसकी सेवा-पूजा करते हैं। पर यह ठीक नहीं। सच्चा देव वही हो सकता है जिसमें राग-द्वेष नहीं जो सबका जानने और देखने वाला हो सकता है और जिसे स्वर्ग के देव, चक्रवर्ती, विधाधर, राजा, महाराजा आदि सभी बड़े-बड़े लोग मस्तक झुकाते हैं और ऐसे देव एक अर्हन्त भगवान् ही हैं ॥६१-६४॥

वे जिन भगवान् मुझे शान्ति दें, जो अनन्त उत्तम-उत्तम गुणों के धारक हैं, सब सुखों के देने वाले हैं, दुःख, शोक, सन्ताप के नाश करने वाले हैं, केवलज्ञान के रूप में जो संसार का आताप हर कर उसे शीतलता देने वाले चन्द्रमा हैं और तीनों लोकों के स्वामियों द्वारा जो भक्तिपूर्वक पूजे जाते हैं ॥६५॥

३८. ब्रह्मणः कथा

नत्वा जिनं जगत्पूज्यमाद्यब्रह्माणमद्भुतम्। ब्रह्मेति देवपुत्रोसौ वक्ष्येऽहं लौकिकीं कथाम् ॥१॥
 एवं मूढाः प्रजल्पन्ति ब्रह्मासावेकदामुदा। इन्द्रादीनां पदं जित्वा सर्वोत्कृष्टो भवाम्यहम् ॥२॥
 इत्यास्थया महाटव्यामूर्द्धबाहुः प्रकष्टतः। देवतार्द्धचतुर्वर्षसहस्राणि महातपः ॥३॥
 कुर्वन्नेकपदेनोच्चैर्भुञ्जानः पवनं स्थितः। तपःशक्त्या तदेन्द्रादेर्जातमासनकम्पनम् ॥४॥
 इन्द्रनागेन्द्ररुद्राद्याः स्वराजक्षयभीतितः। अप्सरोरूपमादाय कृत्वा देवीं तिलोत्तमाम् ॥५॥
 नाना गन्धर्वसद्गान-पेटकाद्यैः समन्विताम्। तत्पाश्वे प्रेषयामासुः सत्तपःक्षयहेतवे ॥६॥
 सापि स्वर्गात्समागत्य तत्ससीपे सुरांगना। हावैर्भावैर्विलासाद्यैः संचक्रे नर्तनं महत् ॥७॥
 सोपि तद्रूपसंसक्तो भूत्वा ब्रह्मा स्वमानसे। प्रोत्फुल्ललोचनस्तां च पश्यति स्म स्मरोहतः ॥८॥
 तच्चित्तं सा परिज्ञात्वा विद्धं कन्दर्पसायकैः। ब्रह्मणो वामपाश्वे च गत्वा नृत्यं चकार च ॥९॥
 दिव्यवर्षसहस्रोत्थतपसा दारुणेन च। तत्रापि वामपाश्वेऽसौ चक्रे वक्त्रं द्वितीयकम् ॥१०॥

३८. लौकिक ब्रह्मा की कथा

संसार के द्वारा पूजे गए भगवान् आदि ब्रह्मा (आदिनाथ स्वामी) को नमस्कार कर, देवपुत्र ब्रह्मा की कथा लिखी जाती है ॥१॥

कुछ असमझ लोग ऐसा कहते हैं कि एक दिन ब्रह्माजी के मन में आया कि मैं इन्द्रादिक का पद छीनकर सर्वश्रेष्ठ हो जाऊँ और इसके लिए उन्होंने एक भयंकर वन में हाथ ऊँचा किए बड़ी घोर तपस्या की। वे कोई साढ़े चार हजार वर्ष पर्यन्त (यह वर्ष संख्या देवों के वर्ष के हिसाब से हैं, जो कि मनुष्यों के वर्षों से कई गुणी होती है।) एक ही पाँव से खड़े होकर तप करते रहे और केवल वायु का आहार करते रहे। ब्रह्माजी की यह कठिन तपस्या निष्फल न गई इन्द्रादि का आसन हिल गया। उन्हें अपने राज्य नष्ट होने का बड़ा भय हुआ। तब उन्होंने ब्रह्माजी का तप भ्रष्ट करने के लिए स्वर्ग की एक तिलोत्तमा नाम की वेश्या को, जो कि गन्धर्व देवों के समान गाने और बड़ी सुन्दर नाचने वाली थी, भेजा। तिलोत्तमा उनके पास आई और अनेक प्रकार के हाव-भाव विलास बतला-बतलाकर नाचने लगी। तिलोत्तमा का नृत्य, तिलोत्तमा की भुवन मनोहारिणी रूपराशि और उसका हाव-भाव-विलास देखकर ब्रह्माजी तपसे डगमगे। उन्होंने हजारों वर्षों की तपस्या को एक क्षण भर में नष्ट कर अपने को काम के हाथ सौंप दिया। वे आँखें फाड़-फाड़कर तिलोत्तमा की रूप राशि को बड़े चाव से देखने लगे। तिलोत्तमा ने जब देखा कि हाँ योगिराज अब अपने आपमें नहीं है और आँखें फाड़-फाड़कर मेरी ही ओर देख रहे हैं, तब उनकी इच्छा को और जागृत करने के लिए वह उनकी बायीं ओर आकर नाचने लगी। ब्रह्मा जी ने तब अपनी हजारों वर्षों की तपस्या के प्रभाव से अपना दूसरा मुँह बाँयी ओर बना लिया। तिलोत्तमा जब उनकी पीठ पीछे आकर नाचने लगी। ब्रह्माजी ने तब तीसरा मुँह पीछे की ओर बना लिया ॥२-१०॥